28

अधीनस्थ विधान संबंधी समिति

लोक सभा सचिवालय
नई दिल्ली

टी. ओ. संख्या 91

मूल्य : 14.00 रु.

© 2014 लोक सभा सचिवालय

लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन नियम (पन्द्रहवां संस्करण) के नियम 382 के अधीन प्रकाशित और मै. जैनको आर्ट इंडिया, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।

आमुख

यह सारांश संसदीय प्रक्रिया सारांश माला का भाग है और इसमें अधीनस्थ विधान संबंधी समिति से संबंधित प्रक्रिया का वर्णन किया गया है। यह लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन नियमों, प्रक्रिया नियमों के अंतर्गत अध्यक्ष द्वारा जारी निदेशों, समिति द्वारा समय-समय पर अनुपालन किए गए पूर्वोदाहरणों और परम्पराओं पर आधारित है। यह संदर्शिका तत्काल संदर्भ के प्रयोजन के लिए है।

इस सारांश में दी गई जानकारी संपूर्ण नहीं है। अत: पूर्ण जानकारी के लिए मूल स्रोतों का ही अवलोकन करें और उन्हीं को विश्वसनीय मानें।

नई दिल्ली;
अप्रैल, 2014
वैशाख, 1936 (शक)

पी. श्रीधरन,
महासचिव।

अधीनस्थ विधान संबंधी समिति

प्राक्कथन

आधुनिक कल्याणकारी राज्य में सरकारी कार्यकलाप मानव व्यवहार के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त हो गया है, जिससे इस निरन्तर व्यापक होते कार्यकलाप को विनियमित करने के लिए विविध विधियां अधिनियमित करने की आवश्यकता पड़ती है। ऐसी परिस्थिति में संसद या राज्य विधानमंडल के लिए विधेयक, जो सम्यक प्रशासन के लिए आवश्यक हो सकता है, के प्रत्येक स्वरूप पर चिन्तन, चर्चा और अनुमोदित करना व्यवहार्य नहीं है। अप्रत्याशित आपदा जरूरतों को पूरा करने, नम्यता की जरूरत और कई अवसरों पर विषय-वस्तु का अति तकनीकी होने से विधानमंडल द्वारा अधीनस्थ प्राधिकारियों को सहायक या अनुषंगी शक्तियों का प्रत्यायोजन करना व्यवहारिक आवश्यकता बन जाता है। वस्तुतः, विधानमंडल को, जो कुछ करती है, और कर सकती है, विधान बनाने के व्यापक नीति और सिद्धांतों को निर्धारित करना होता है और वह यह कार्यपालिका पर छोड़ती है ताकि वह उन सिद्धांतों के अनुसार औपचारिक और प्रक्रिया संबंधी ब्यौरा तैयार करें जो विधिक प्रलेख के रूप में हो। ऐसी परिस्थिति में जहां

1

विधायी संबंधी नीति के कार्यान्वयन के लिए विधानमंडल नियम और विनियम बनाने हेतु परम सत्ता के बजाए बाह्य प्राधिकारी को शक्तियां प्रदान करती है, उसे अधीनस्थ या अनुषंगी विधान माना जाता है। दूसरे शब्दों में 'अधीनस्थ विधान' का अभिप्राय विधानमंडल के अधीनस्थ निकाय द्वारा विधिक प्रलेख बनाना है और विधानमंडल द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग विशिष्ट सीमा के अंदर करना है।

अधीनस्थ विधान पर नियंत्रण रखने की आवश्यकता

2. यद्यपि, सार्वभौमिक रूप से अब अधीनस्थ विधान को अनिवार्य और अपरिहार्य माना जाता है, तथापि सामान्यत: इस बात पर सहमति है कि कार्यपालिका को विधायी शक्तियां प्रत्यायोजित करने की प्रवृत्ति खतरनाक है। राजनीतिक पंडितों और इस विषय में अभिरुचि रखने वाले अन्य जानकारों का मानना है कि संबंधित विभागों या प्राधिकारियों, जिन्हें अनुषंगी विधायी शक्तियां प्रत्यायोजित की जाती हैं, उन मौलिक प्रकृति के मामलों को विनियमित करते हैं जो नागरिकों के अधिकारों और हितों को बहुत ही प्रभावित कर सकते हैं। कतिपय परिस्थितियों में विधायी शक्तियों से युक्त प्रशासकगण जनता की स्वतंत्रता का हनन कर सकते हैं। अधीनस्थ विधान की प्रणाली में एक अन्य अंतर्निहित जोखिम यह है कि विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उत्साह में

अधिकारीगण नागरिकों पर विभिन्न शर्तों और औपचारिकताओं का अनुपालन करने की अपेक्षा डालकर उन पर अवांछनीय बोझ डाल सकते हैं, जिससे व्यक्तिगत अधिकार और स्वतंत्रता सीमित हो सकती है। ऐसी प्रवृत्तियां नौकरशाही को मजबूत करती हैं और इसके परिणामस्वरूप अवांछनीय जटिलताएं और समस्याएं उत्पन्न होती हैं। इसलिए, दो प्रासंगिक प्रश्न पैदा होते हैं—प्रथम, विधानमंडल द्वारा अधीनस्थ प्राधिकारियों को कितनी शक्तियां प्रत्यायोजित की जानी चाहिए? और दूसरा, प्रत्यायोजित शक्तियों का प्रयोग करने वाले प्राधिकारियों पर कौन-कौन से प्रतिबंध या सुरक्षोपाय लगाए जाने चाहिए? आज, प्रत्यायोजित विधान की वांछनीयता या अन्यथा समस्या नहीं है, वरन् अधीनस्थ विधान पर प्रभावी संसदीय नियंत्रण सुनिश्चित करने के लिए लगाए जा सकने वाले नियंत्रण और सुरक्षोपाय से संबंधित हैं ताकि प्रदत्त शक्तियों का दुरुपयोग या दुष्प्रयोग न हो।

अधीनस्थ विधान पर संसदीय नियंत्रण

3. संसद के पास यह देखने का अन्मूर्त अधिकार है कि उसके द्वारा नियमों, उप-नियमों, विनियमों, उप-विधियों आदि बनाने के लिए प्रत्यायोजित शक्तियों का संविधि की उन शर्तों के साथ सामंजस्य से प्रयोग किया गया है जो ऐसी शक्तियों का प्रत्यायोजन करते हैं और साथ ही यह प्रत्यायोजन के सामान्य सिद्धांतों के

अनुसार किया गया हो। इसके पास यह भी जांच करने का अधिकार है कि संविधान द्वारा प्रदत्त कानून बनाने की शक्तियों का, जो विधायी चरित्र का अनिवार्य रूप है, कार्यपालिका द्वारा उचित रूप से प्रयोग किया जाता है। अधीनस्थ संबंधी विधान पर संसदीय नियंत्रण कई प्रकार से प्रयोज्य है। पहला, विद्यमान सांविधिकों में प्राय: यह अपेक्षा होती है कि अधीनस्थ प्राधिकारियों द्वारा बनाए गए नियमों, विनियमों, आदेशों आदि को संसद के समक्ष रखा जाए। दूसरा, नियंत्रण करने के अन्य उपाय भी हैं जिन्हें विधानमंडल के सदस्यगण स्वयं प्रयोग कर सकते हैं। इन उपायों में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित शामिल हैं— (एक) किसी भी समय और किसी भी विषय पर मंत्री से प्रश्न करना; (दो) किसी सांविधिक के कार्यान्वयन संबंधी प्रभारी मंत्री के विरुद्ध अवमानना का प्रस्ताव लाना; और (तीन) अधीनस्थ विधान से संबंधित विषय पर चर्चा करना। यद्यपि, ये उपाय हमेशा संतोषजनक कार्य नहीं करते हैं और इसलिए प्रत्यायोजित विधान के प्रयोग पर दृष्टि रखने के लिए विधायी निकायों में विशेष समितियों द्वारा इन कमियों को दूर करने की आवश्यकता होती है और तद्नुसार रिपोर्ट देनी होती है।

लोक सभा की अधीनस्थ विधान संबंधी समिति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

4. इस प्रयोजन हेतु एक पृथक संसदीय समिति होने की आवश्यकता उस समय महसूस की गई जब 1950 में आयोजित

बजट सत्र के दौरान तत्कालीन विधि मंत्री डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अंतरिम संसद में सुझाव दिया कि प्रत्यायोजित विधान की जांच करने के लिए सदन की स्थायी समिति होनी चाहिए। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के सुझाव के अनुसरण में अधीनस्थ विधान संबंधी समिति के गठन का प्रस्ताव किया गया और संगत नियम बनाए गए जिसे 24 अप्रैल, 1951 को आयोजित बैठक में सदन की नियम समिति ने स्वीकार कर लिया। यद्यपि, प्रस्ताव को मूर्त रूप देने में कुछ समय लगा और 1 दिसम्बर, 1953 को लोक सभा के अधीनस्थ विधान संबंधी पहली दस-सदस्यीय समिति का गठन हुआ, जिसे इस बात की जांच करना और सदन को रिपोर्ट करना था कि क्या विनियमों, नियमों, उप-नियमों, उप-विधियों आदि बनाने संबंधी सांविधिक द्वारा प्रदत्त या संसद द्वारा प्रत्यायोजित शक्तियों का निर्धारित सीमा के अंदर सम्यक प्रयोग किया गया है। बाद में, 9 जनवरी, 2014 को संगत नियमों में संशोधन करते हुए समिति की सदस्य संख्या को बढ़ाकर 15 कर दिया गया। लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य संचालन नियमों के नियम 317-322 और लोक सभा अध्यक्ष के निदेशों के निदेश 103-108 के अंतर्गत समिति का गठन किया गया है।

समिति की संरचना और कार्यकाल

5. समिति में पंद्रह से ज्यादा सदस्य नहीं होंगे और अध्यक्ष द्वारा इनका नामनिर्देशन होगा। शर्त यह है कि मंत्री का नामनिर्देशन

समिति के सदस्य के रूप में नहीं होगा और यदि कोई सदस्य, समिति में नामनिर्देशन होने के बाद मंत्री नियुक्त होता है तो ऐसा सदस्य ऐसी नियुक्ति की तारीख से समिति का सदस्य नहीं बना रहेगा। समिति का कार्यकाल इसकी नियुक्ति की तारीख से 1 वर्ष के लिए होता है। नई लोक सभा के प्रारंभ में अधीनस्थ विधान संबंधी समिति का गठन किया जाता है और इसके उपरांत प्रत्येक वर्ष इसका पुनर्गठन होता है।

समिति के कृत्य

6. अधीनस्थ विधान संबंधी समिति के कृत्य इस बात की छानबीन करना और सभा को प्रतिवेदित करना है कि संविधान द्वारा प्रदत्त या संसद द्वारा प्रत्यायोजित विनियम, नियम, उप-नियम, उप-विधि आदि बनाने की शक्तियों का प्रयोग ऐसे प्रत्यायोजन के अन्तर्गत उचित रूप से किया जा रहा है।

समिति द्वारा अपनाए जाने वाली प्रक्रिया

(एक) आदेशों की जांच

7. अधीनस्थ विधान संबंधी समिति, लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य संचालन नियमों के नियम 320 में संविधान के उपबन्धों या किसी अधीनस्थ प्राधिकारी को प्रत्यायोजित वैधानिक कृत्यों के अनुसरण में बनाये गये सभी विनियमों, नियमों, उप-नियमों,

उप-विधि आदि, जिन्हें सामान्य तथा ''आदेश'' कहा जाता है जो सभा पटल पर रखे गए हों अथवा नहीं, की जांच करना है जो निम्नानुसार है:

''320. नियम 319 में निर्दिष्ट प्रत्येक ऐसे आदेश के सभा के समक्ष रखे जाने के बाद, समिति विशेष रूप से इस बात पर विचार करेगी कि:—

(एक) वह संविधान अथवा उस अधिनियम के सामान्य उद्देश्यों के अनुकूल है या नहीं जिसके अनुसरण में वह बनाया गया है;

(दो) उसमें ऐसा विषय अन्तर्विष्ट है या नहीं जिसको अधिक समुचित ढंग से निपटाने के लिए समिति की राय में संसद का अधिनियम होना चाहिये;

(तीन) उसमें कोई करारोपण अन्तर्विष्ट है या नहीं;

(चार) उसमें न्यायालयों के क्षेत्राधिकार में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से रुकावट होती है या नहीं;

(पांच) वह उन उपबन्धों में से किसी को भूतलक्षी प्रभाव देता है या नहीं जिनके संबंध में संविधान या अधिनियम स्पष्ट रूप से ऐसी कोई शक्ति प्रदान नहीं करता;

(छह) उसमें भारत की संचित निधि या लोक राजस्व में से व्यय अन्तर्ग्रस्त है या नहीं;

(सात) उसमें संविधान या उस अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्तियों का असामान्य अथवा अप्रत्याशित उपयोग किया गया प्रतीत होता है या नहीं, जिसके अनुसरण में यह बनाया गया है;

(आठ) उसके प्रकाशन में या संसद के समक्ष रखे जाने में अनुचित विलम्ब हुआ प्रतीत होता है या नहीं; और

(नौ) किसी कारण से उसके रूप या अभिप्राय के लिए किसी विशदीकरण की आवश्यकता है या नहीं।''

(दो) विधेयकों की जांच

8. समिति इस बात की भी जांच करती है कि जिन विधेयकों में पिछले अधिनियमों को संशोधित करने अथवा 'आदेशों' का पालन सुनिश्चित करने हेतु शक्तियां प्रदान करने संबंधी प्रावधान किए गए हैं क्या उन प्रावधानों में उक्त आदेशों को सभा पटल पर रखने हेतु समुचित उपबंध भी किए गए हैं अथवा नहीं। तथापि, विधेयकों के जांच की प्रक्रिया 'आदेशों' के जांच की प्रक्रिया के समान ही है।

(तीन) अध्यक्ष द्वारा समिति को निर्दिष्ट विधेयकों की जांच

9. अध्यक्ष, विधायी शक्तियों के प्रत्यायोजन संबंधी उपबंधों वाले विधेयकों को भी समिति को निर्दिष्ट कर सकेगा और यदि

कोई विधेयक इस प्रकार सौंपा जाये तो समिति जो शक्तियां प्रत्यायोजित की जानी हों उनकी सीमा; और यदि शक्तियां किन्हीं सहायक उपबंधों को कार्यान्वित करने अथवा आगे कोई नियम व विनियम बनाने के लिए राज्य सरकारों अथवा अन्य प्राधिकारियों को प्रत्यायोजित की जानी हों, तो ऐसे प्रत्यायोजन की आवश्यकता और संबंधित अधीनस्थ प्राधिकारियों द्वारा ऐसी शक्तियों के प्रयोग की सीमा तथा रीति की जांच करेगी।

यदि समिति की राय हो कि विधायी शक्तियों का प्रत्यायोजन करने वाले विधेयक में निहित उपबन्ध पूर्णत: अथवा अंशत: रद्द कर दिये जायें अथवा उनमें किसी प्रकार संशोधन कर दिया जाए तो सभा में उस विधेयक पर विचार आरम्भ होने से पूर्व वह अपनी राय और उसके आधारों को सभा को बतायेगी।

समिति का कार्यकरण

10. नियमों, विनियमों और आदेशों की संवीक्षा करने के दौरान अधीनस्थ प्राधिकारी द्वारा नियम बनाने की शक्ति के प्रयोग के संबंध में कोई मुद्दा उठता है, तो संबंधित मंत्रालय/विभाग से स्पष्टीकरण मांगा जाता है। तत्पश्चात् यह मामले को भेजे गए बिन्दुओं को इंगित करते हुए जिस उपबंध पर आपत्ति की गई है और आपत्ति के आधार का ब्यौरा देते हुए ज्ञापन के रूप में उस पर मंत्रालय की टिप्पणियों को समिति के समक्ष रखा जाता है।

समिति ज्ञापन पर विचार करती है और अपने निष्कर्ष पर पहुंचती है। यदि आवश्यक समझा जाए तो मंत्रालय के प्रतिनिधियों को और स्पष्टीकरण के लिए व्यक्तिगत रूप से समिति के समक्ष उपस्थित होने के लिए बुलाया जाता है। समिति द्वारा विभिन्न बिन्दुओं पर उन्हीं टिप्पणियों और सिफारिशों की संवीक्षा की जाती है, जिन्हें वह अपने प्रतिवेदन में शामिल करती है।

समिति नियमों और विनियमों और अन्य प्रत्यायोजित विधान संबंधी उन अभ्यावेदनों जो समिति को संघों, संस्थानों और निजी निकायों द्वारा प्रस्तुत की जाती है की जांच और संवीक्षा भी करती है। समिति ऐसे संघों और संस्थानों के प्रतिनिधियों को सुनती है, अभ्यावेदनों में उल्लिखित बिन्दुओं पर स्पष्टीकरण मांगती है और अपनी आपत्तियां और सिफारिशें करने से पूर्व संबंधित विभागों से आवश्यक स्पष्टीकरण भी मांगती है।

अध्ययन दौरे

11. किसी नियम/विनियम अथवा उप-विधि आदि जिन्हें सामान्यत: ''आदेश'' कहा जाता है, पर विचार किए जाने के दौरान यदि समिति यह महसूस करती है कि ''आदेश'' को लागू करने के बारे में प्राथमिक जानकारी प्राप्त करने के लिए किसी संगठन विशेष का तत्स्थानिक अध्ययन दौरा किया जाना चाहिए तो समिति अध्यक्ष की विशिष्ट अनुमति से ''आदेश'' से संबंधित संगठन का दौरा कर सकती है।

प्रतिवेदन

12. समिति समय-समय पर सभा को अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। यदि समिति का मत हो कि किसी आदेश को पूर्णतया अथवा आंशिक रूप से रद्द किया जाना चाहिए अथवा किसी प्रकार का कोई संशोधन किया जाना चाहिए, तो समिति तत्संबंधी मत और आधारों को सभा को प्रस्तुत करेगी। इसके अतिरिक्त यदि समिति का मत है कि किसी आदेश से संबंधित किसी अन्य विषय को सभा के ध्यान में लाया जाना चाहिए, तो समिति उस मत और विषय को सभा को प्रस्तुत कर सकती है। अध्यक्ष समिति अथवा सभा में अधीनस्थ विधान के किसी प्रश्न के विचार किए जाने से संबंधित सभी विषयों के संबंध में प्रक्रिया के विनियमन हेतु यदि आवश्यक समझा जाए, इस प्रकार के निदेश जारी कर सकते हैं।

समिति के प्रतिवेदनों में अंतर्विष्ट सिफारिशों के संबंध में सरकार को छह महीने के भीतर कार्रवाई करनी होती है और प्रत्येक मामले में की-गई-कार्यवाही अथवा की जाने वाली प्रस्तावित कार्रवाई की जानकारी समिति को देनी होती है। समिति की सिफारिशों/टिप्पणियों पर सरकार द्वारा की-गई-कार्यवाही की जांच की जाती है और की-गई-कार्यवाही प्रतिवेदन में शामिल की जाती है, जिसे सभा को भी प्रस्तुत किया जाता है।

अधीनस्थ विधान संबंधी समिति द्वारा की गई महत्वपूर्ण सिफारिशें/टिप्पणियां

13. समिति द्वारा की गई महत्वपूर्ण सिफारिशें/टिप्पणियां इस प्रकार हैं:—

(एक) लोक सभा के प्रक्रिया तथा कार्य संचालन नियमों के नियम 70 के उपबंध अनिवार्य हैं और इसलिए प्रत्येक ऐसे विधेयक के मामले में, जिसमें केन्द्र सरकार अथवा किसी अन्य प्राधिकारी को विधायी शक्ति का प्रत्यायोजन अंतर्ग्रस्त हो, इनका निरपवाद रूप से अनुपालन न किया जाए।

(दो) सामान्यतया अधिनियम के प्रभावी होने के बाद यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र नियम बनाए जाने चाहिए और किसी भी परिस्थिति में यह अवधि छह माह से अधिक नहीं होनी चाहिए।

(तीन) जहां तक संभव हो, नियमों में जटिल भाषा का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। नियम स्पष्ट और निश्चित होने चाहिए। अस्पष्ट अभिव्यक्तियों (जैसे अनावश्यक भारी मात्रा), जिनकी अलग-अलग व्यक्तियों द्वारा अलग-अलग प्रकार से व्याख्या की जा सकती है, का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

(चार) उन मामलों, जिनमें नियमों को प्रारूप के रूप में प्रकाशित किया जाना आवश्यक है, आम जन को प्रारूप नियमों पर उनकी टिप्पणियां/सुझाव देने के लिए निरपवाद रूप से न्यूनतम पूरे 30 दिन का समय दिया जाना चाहिए।

(पांच) उन आदेशों, जिन्हें यदि सभा का सत्र चल रहा हो तो सभा के समक्ष रखा जाना अपेक्षित है, को राजपत्र में उनके प्रकाशन होने के 15 दिन की अवधि के भीतर रखा जाना चाहिए और यदि उस समय सभा का सत्र नहीं चल रहा हो तो ''आदेशों'' को आगामी सत्र के आरम्भ होने के यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र (15 दिनों के भीतर) सभा पटल पर रखा जाना चाहिए। जब कभी भी आदेश अत्यधिक विलंब के साथ सभा पटल पर रखे जाते हैं इसके विलंब के कारणों को दर्शाने वाले स्पष्टीकरण टिप्पण को इनके साथ लगाया जाना चाहिए।

(छह) संवैधानिक या सांविधिक उपबंधों के अनुसरण में सरकार द्वारा बनाए गए सभी नियम अनिवार्य रूप से लोक सूचना हेतु राजपत्र में प्रकाशित किए जाएं।

(सात) नियमों की तरह विनियमों को भी सभा के समक्ष रखा जाना चाहिए और संगत संविधियों में इसके लिए उपबंध होने चाहिए।

(आठ) जब मुख्य नियमों को सभा के समक्ष रखा जाना हो, नियमों के अंतर्गत बनाए गए सभी सांविधिक आदेशों को सभा पटल पर रखा जाना चाहिए।

(नौ) जब भी सभा पटल पर नियम रखे जाते हैं, उद्देश्य और कारणों का कथन और नियमों संबंधी व्याख्यात्मक टिप्पणों को भी इसके साथ परिशिष्ट के रूप में जोड़ा जाए। जब मूल नियमों को संशोधित करने वाले नए नियम सभा पटल पर रखे जाएं तो मूल नियम के संशोधन किए जाने वाले संगत उद्धरणों को भी संशोधन किए जाने वाले नियमों के साथ संलग्न किया जाए।

(दस) केवल प्रक्रिया और ब्यौरे संबंधी मामलों को ही अधीनस्थ विधान के माध्यम से वर्णित किया जाना चाहिए। वास्तविक मामलों को स्वयं अधिनियम के भीतर ही वर्णित किया जाना चाहिए।

(ग्यारह) किसी प्रभार की उगाही नहीं की जानी चाहिए जब तक कि इस हेतु मूल कानून में प्राधिकार व्यक्त न हो।

(बारह) नियमों या उप-विधि के अंतर्गत फीस लगाने की शक्ति मूल अधिनियम में स्पष्टत: व्यक्त की जानी चाहिए।

(तेरह) भू-राजस्व के बकाये के रूप में उत्पाद शुल्क की देयराशि को वसूलने संबंधी उपबंध, जो कि अंतिम उपाय

की प्रकृति का है, एक तात्विक उपबंध है जिसके लिए स्वयं अधिनियम में विशेष प्राधिकरण बनाना चाहिए न कि इसके अंतर्गत नियम बनाने चाहिए।

(चौदह) अधीनस्थ विधान को मूल अधिनियम में व्यक्त प्राधिकार के बिना पूर्वव्याप्ति प्रभाव नहीं दिया जा सकता। यहां तक कि ऐसे मामलों में जहां सरकार को अधीनस्थ विधान को प्रभावी करने की शक्ति हो, ऐसी शक्तियों को केवल अपरिहार्य परिस्थितियों में ही प्रयुक्त किया जाना चाहिए, और इसके अंतर्गत प्रत्येक मामले में तैयार नियमों/विनियमों के साथ विवरणात्मक टिप्पण या ज्ञापन लगाना चाहिए जो यह अभिपुष्ट करता है कि इसके पूर्व व्याप्ति से प्रभाव में आने से किसी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका नहीं है।

(पन्द्रह) नियम इस तरह नहीं बनाए जाने चाहिए कि अन्याय हो।

(सोलह) नियम प्राकृतिक न्याय के नियमों के अनुरूप होने चाहिए। कार्यपालिका के निर्णय से प्रतिकूल रूप से प्रभावित पक्ष को सुने जाने का अधिकार प्रदान करना, ऐसे निर्णय के कारणों को लिखित में रिकार्ड करना और इसके बारे में संबंधित पक्ष को सूचित करना प्राकृतिक न्याय की मूल आवश्यकताएं हैं।

15

(सत्रह) जब व्यथित व्यक्ति को अपील करने का अधिकार दिया गया है, तो अधिकार केवल आभासी नहीं होना चाहिए। अपील दायर करने के लिए युक्तिसंगत समय-सीमा होनी चाहिए।

(अठारह) अन्य पदाधिकारी को उप-प्रत्यायोजन प्राधिकार देने से पूर्व कुछ सुरक्षोपाय किए जाने चाहिएं।

(उन्नीस) इस तथ्य को मानते हुए कि रिक्तियों को भरने की विधि और वरिष्ठता निर्धारण के नियम किसी भी सेवा नियमों के आधारभूत तत्व हैं, इन्हें नियमों में अन्तर्विष्ट किया जाना चाहिए और इन्हें कार्यकारी अनुदेशों के माध्यम से निर्धारण हेतु नहीं छोड़ा जाना चाहिए।

(बीस) नियमों में छूट व्यक्तियों के वर्ग या श्रेणी के संबंध में होनी चाहिए और न कि किसी व्यक्ति के संबंध में, ताकि समान पदों पर कार्यरत व्यक्तियों के मध्य भेदभाव की संभावना का निवारण किया जा सके। इसके अतिरिक्त यदि छूट संबंधी उपबंध को नियमों में अंतर्विष्ट किया जाता है तो इसमें यह व्यवस्था होनी चाहिए कि छूट प्रदान करने से पूर्व इस हेतु लिखित में कारण रिकॉर्ड किए जाने चाहिएं।

(इक्कीस) ऐसे मामलों में जहां तलाशी/जब्ती करने की शक्ति अधिकारियों में निहित हो, ऐसी शक्तियों का प्रयोग करने वाले अधिकार प्राप्त अधिकारियों का न्यूनतम पद नियमों में विनिर्दिष्ट होना चाहिए। इसके अतिरिक्त साक्षियों की उपस्थिति, मालसूचियों को तैयार करना और इसकी प्रतियां संबंधित व्यक्तियों को देने जैसे सुरक्षोपाए की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(बाईस) समूह 'क' और समूह 'ख' पदों की भर्ती के मामले में संगत भर्ती नियमों में संघ लोक सेवा आयोग के साथ परामर्श का उपबंध समाविष्ट होना चाहिए।

(तेईस) अंतिम प्रकृति के उपबंध जैसे आदेश, सम्मन या नोटिस इत्यादि की तामील नियमों के भाग में होने चाहिए। यदि अत्यधिक आवश्यक हो तो इन नियमों का उपबंध मूल अधिनियम में किया जाना चाहिए।

(चौबीस) समिति द्वारा भेजी गई संसूचना पर संबंधित मंत्रालय/विभाग के काफी उच्च स्तर के अधिकारी द्वारा कार्य किया जाना चाहिए और इसके उत्तर वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा हस्ताक्षरित किए जाने चाहिएं जो उप-सचिव के रैंक के अधिकारी से नीचे के न हों।

(पच्चीस) ऐसे मामलों में जहां जनता से टिप्पणियों/सुझावों को आमंत्रित करने हेतु प्रारूप रूप में नियम/विनियम/विधि प्रकाशित की जाती हैं, तो इन टिप्पणियों/सुझावों की प्राप्ति के 3 माह के भीतर अंतिम रूप देकर अंतिम रूप में अधिसूचित किया जाना चाहिए।